राजस्थानी लोक संगीत की धुनों से बातें करती है जैसलमेर की हवेलियाँ

हम आपको ले चलते है थार के रेगिस्तान के मध्य से एक स्वर्णिम मरीचिका की तरह उगते जैसलमेर शहर की शोभा को निहारने । संकरी गलियों में सजे हस्तशिल्प के बाजारों के बीच स्थापत्य एवं कारीगरी में अद्भुत भव्य हवेलिया और भवन मध्यकालीन राजशहरी की याद ताजा करते हैं।

पहाड़ी पर बसे सोनार किले का समम्मोहन किसी से कम नहीं है। ऐसा अद्भुत नजारा रेत के धोरो के बीच किसी आश्चर्य से कम नही हैं। रेगिस्ताान का यह किला मानो एरेबियन नाईट्स की कथाओं से निकल आया है। सूर्योदय एवं सूर्यास्त में सोने सा दमकता है। अस्त होता सूर्य जैसलमेर को आकर्षक सुनहरे रंग में बदल देता हैं। सम एवं खुरडी के रेतीले टीलों पर शाम का दृश्य अत्यन्त मन भावन होता है। लोक गीत-नृत्य से रात जवान हो उठती है। वहॉ की रात का आनंद रात बीताने वाला ही महसूस कर सकता है। रेत के टीलों पर ऊँट की सवारी एवं टेंट मे रात गुजारना किसी मनोरंजन रोचक फिल्म से कम नही हैं। फरवरी माह में होने वाले मरू उत्सव की अनोखी शोभा देखने के लिये बडी संख्या में देश-विदेश के सैलानी जुटते हैं। लोक नृत्य,रोमांचक प्रतियोगिताएं विशेष कर पगड़ी बाधने एवं मरू श्री प्रतियोताए और ऊँटों की दौड़ मरूउत्सव को जीवंत बना देते हैं।

ऐतिहासिक महत्व का अंदाजा इसी से लगाया जा सकता है कि जैसलमेर जिला प्राचीन सिन्धु घाटी का क्षेत्र रहा है। माना जाता है महाभारत युद्व के बाद मथुरा से बडी संख्या में यादवों का बहिर्गमन हुआ। यहॉ के शासकों के पूर्वज अपने को भगवान कृष्ण के वशंज मानते थे। संभवत छठी शताब्दी में वे जैसलमेर के भू-भाग पर आ बसे। जिले में यादवों के वंशज भाटी राजपूतो की प्रथम राजधानी तनोट,दूसरी लोद्रवा एवं तीसरी जैसलमेर रही ।

मरू शहर जैसलमेर की स्थापना भाटी राजा जैसल ने 1156 ई. की थी। उन्होंने लोद्रवा को असुरक्षित मान कर अपनी राजधानी त्रिकुट पर स्थापित की। रियासत काल के आखरी समय में स्वाधीनता प्राप्ति के साथ मार्च 1949 को जैसलमेर वृहत राजस्थान में शामिल किया गया एवं 6 अक्टूबर 1949 को इसे पृथक जिले का दर्जा दिया गया । वर्ष 1953 में इसका दर्जा घटा कर जोधपुर जिले का उपखण्ड बना दिया गया । आगे चल कर वर्ष 1954 में जैसलमेर को पुन: जिला बनाया गया।

यह पाकिस्तान से जुड़कर अन्तर्राष्ट्रीय सीमा का जिला है। बीकानेर एवं जोधपुर जिलों की सीमाएं

जैसलमेर को जोड़ती हैं। जिले का क्षेत्रफल 38401 वर्ग कि.मी है जो क्षेत्रफल की दृष्टि से राजस्थान का सबसे बडा जिला हैं। इसका प्राचीन नाम मांडधरा था। इसे स्वर्ण नगरी, पीले पत्थरों का शहर, हवेलियों एवं झरोखों की नगरी, रेगिस्तान का गुलाब , राजस्थान का अण्डमान आदि संज्ञाओं से विभूषित किया गया है। जिले का अधिकांश भाग मरूस्थल हैं। यह राज्य पक्षी गोडावन का घर माना जाता है। अभयारण में चिंकारा, मरूबिल्ली, लोमड़ी, सियार, भेड़िया एवं मरू खरगोश प्रमुख रूप से पाये जाते हैं। जैसलमेर से 17 कि.मी दूरी पर स्थित आंकड वुड फॉसिल्स पार्क में 18 करोड़ वर्ष पुराने पेड़ पौधों के जीवाष्म पाये जाते हैं।

अर्थव्यवस्था का मुख्य आधार पर्यटन उद्योग है। हर वर्ष बड़ी सख्या में देशी – विदेशी सैलानी यहॉ आते हैं। पर्यटन पर आधारित 5 स्टार से लेकर हर श्रेणी के होटल,हस्तशिल्प,टूर ऑपरेटर,गाईड आदि पर बडी संख्या में लोगों को रोजगार प्राप्त है। खादी-ग्रामोद्योग का व्यवसाय बड़े पैमाने पर पाया जाता है। पत्थर पर नक्काशी, पटटू, ऊनी, शाल, कढाईदार वस्तुएं प्रमुख हस्तशिल्प हैं। यहॉ राज्य की पहली पवन ऊर्जा परियोजना से उत्पादन किया जा रहा है। रामगढ में गैस पर आधारित विद्युत परियोजना स्थापित है।

कला एवं संस्कृति की दृष्टि से लोक कलाकार अपने लोकवा द्यों के सुर, गायन एवं नृत्य से सभी का मन मोह लेते हैं। मिरासी, मांगणियार एवं लंगा जाति के लोग परंपरागत लोक कलाकार है। राजस्थानी लोक संगीत में इनका विशेष योगदान है। कामड़ जाति की महिलाओं का तेरह ताली नृत्य अद्भुत होता है। जैसलमेर चित्र शैली में महेन्द्र एवं मूमल चित्रण विख्यात हैं। रावण हत्था पाबूजी के भोपों का मुख्य वाद्य है। माघ और भाद्रपद की शुक्ल पक्ष मे दूज की एकादशी तक भरने वाला विख्यात रामदेव का मेला साम्प्रदायिक सद्भाव का प्रतीक है। हर वर्ष माघ सुदी 13 से पूर्णिमा तक आयोजित मरू उत्सव विश्व विख्यात हैं। रामदेवरा जिले का प्रमुख तीर्थ स्थल हैं । जैसलमेर में विभिन्न संप्रदायों के प्रति बहुत आस्था रही है। इनमें राम स्नेही, नाथपंथ, वल्लभ एवं श्वेताम्बर पंथी जैन समुदाय मुख्य हैं।

कला के साथ-साथ जैसलमेर साहित्य का महत्वपूर्ण केन्द्र रहा हैं। जैन ग्रंथों का विपुल भंडार यहॉ के दुर्ग में संयोजन गया है। ताम्र पत्र एवं कागज पर ग्रंथ हस्तलिखित हैं। जैन ग्रंथों के साथ – साथ अन्य साहित्य में काव्य, व्याकरण ,नाटक, सांख्य, श्रृंगार, न्याय, मीमांशा, आयुर्वेद एवं योग आदि विषयों पर उत्कृष्ट रचनाएं प्रमुख हैं। हवेलियों एवं मंदिरों का शिल्प एवं स्थापत्य बेमिसाल और आकर्षक हैं ।

जैसलमेर घूमने के लिए अक्टूबर से मार्च का समय सबसे अच्छा है। इसी दौरान जनवरी फरवरी में आयोजित होने वाले मरू उत्सव के दौरान शहर में बिखरे इन्द्रधनुषी रंगों में जब जैसलमेर नहाता है तो आने वाले सैलानियों की खास पसन्द बन जाता है। लोक वाद्ययों की ताल पर गायकों की सुरीले स्वर एवं लोक कलाकारों के लुभावने नृत्य वातावरण को रेगिस्तानी अंचल की लोक संस्कृति का प्रतीक बना देते हैं और गीतों और नृत्यों पर विदेशी भी थिरकने को मजबूर हो जाते हैं। लोक नृत्य के साथ-साथ विविध प्रतियोगिताएं विशेषकर पगड़ी बांधने, मरू श्री एवं ऊँटों की दौड़ इस उत्सव को जीवन्त रूप प्रदान करती हैं। इस मौके पर आयोजित होने वाले हस्तशिल्प के रंग-बिरंगे बाजार देखते ही बनते हैं। पूर्णमासी की रात में सम के रेतीले धोरों की पृष्ठभूमि में लोक कलाकारों का संगम देखते ही बनता है।

जैसलमेर राज्य की राजधानी जयपुर के 575 कि.मी दूर है। राजस्थान के सभी शहरो से सड़क मार्ग से जुड़ा है। तथा रेल द्वारा जयपुर से जुड़ा है। जो दिल्ली देश की राजधानी से जोड़ता है । हवाई अड्डा भी है जो स्पाइस गैट द्वारा दिल्ली एवं मुंबई से जुड़ा है। जैसलमेर से 285 किमी. दूर जोधपुर मे एयरपोर्ट सेवा उपलब्ध हैं। जीप, टेक्सी कार, ऑटो साधन स्थानीय स्तर पर उपलब्ध हैं।

सोनार किला

रेगिस्तान का अविभूत करने वाला सोनार किले के अन्दर मध्ययुगीन जीवन एवं ऐश्वर्य का जादू दिखाई देता है जो भव्य महलों, हवेलियों, मंदिरों में अनाम शिल्पियों की कारीगरी का जीवन्त उदाहरण है। त्रिकूट पर्वत पर बना सोनार किला जमीन से 250 फीट की ऊँचाई पर स्थित है। पीले पत्थरों से बने इस किले का महत्व इस बात से है कि इसमें कहीं भी चूने का प्रयोग नहीं किया गया है। किला 1500 फीट लम्बा एवं 700 फीट चौड़ा है तथा किले में 30-30 फीट ऊँचे 99 बुर्ज बने हैं। दोहरी सुरक्षा व्यवस्था के चलते यह किला हमेशा अभेद्य रहा। किले में प्रवेश के लिए अखेपोल, सूरजपोल, गणेशपोल एवं हवापोल चार दरवाजे बने हैं। हवापोल के बाद एक विशाल प्रांगण आता है जिसके चारों तरफ मकान, महल व मंदिर बनाये गये हैं। यहां बना रंग महल, गजनिवास एवं मोती महल स्थापत्य कला के शानदार नमूने हैं। महलों में भित्ती चित्र तथा लकड़ी पर की गई बारिक नक्काशी का कार्य देखने योग्य है।

महलों में पत्थर की सुन्दर जालियां एवं झरोखें सुन्दरता प्रदान करते हैं। महलों के सामने आदिनारायण एवं शक्ति के मंदिर बने हैं। दुर्ग में लक्ष्मीनाथ जी का एक मात्र हिन्दू मंदिर सोने व चाँदी के कपाटों के कारण विशेष महत्व रखता है। आस-पास कारीगरी में अनुपम जैन मंदिर 14 वीं एवं 15 वीं शताब्दी की स्थापत्य व मूर्ति कला का सुन्दर नमूने हैं। मंदिरों के तल गृह में जिन भद्र सूरी ज्ञान भण्डार में दुर्लभ एवं प्राचीन पाण्डुलिपियों का संग्रह किया गया है। यहां 1126 ताड़पत्र एवं 2252 कागज पर लिखी पाण्डुलिपियां पाई जाती हैं। सबसे लम्बी पाण्डुलिपी ताड़पत्र पर लिखी जो 32 इंच लम्बी हैं।

भारत में जैन कला एंव स्थापत्य के उच्चतम प्रतीकों का दर्शन करना हो तो चले आइये जैसलमेर। राजस्थान की मरूधरा के इस शहर में बने विश्व प्रसिद्ध सोनार किले में जैन एवं हिन्दु मंदिरों का एक ऐसा भव्य समूह है जो कारीगरी में अपनी सानी नहीं रखता। मंदिर समूह मं शामिल पार्श्वनाथ जैन मंदिर मं वद्धिरत्नमाला के अनुसार 1257 मूर्तियां बनाई गई हैं। जिस शिल्पकार ने इनकी रचना की उसका नाम धत्रा है। मंदिर का मुख्य द्वार पीले पत्थर से निर्मित अलंकृत तोरण द्वार है। तोरण द्वार के खंभो में देवी-देवताओं, वादकों, वादिकाओं को नृत्य करते हुए, हाथी, सिंह, घोडे पक्षी उंकेरे गये हैं जो सुन्दर बेलबूटों से सजे हैं। तोरण द्वार के उपरी शिखर के मध्य पार्श्वनाथ की ध्यानमुद्रा की प्रतिमा बनी है। दूसरे प्रवेश द्वार पर मुख मण्डप के नीचे तीन तोरण एवं इनमें कारीगरी पूर्ण छत विभिन्न प्रकार की कलात्मक आकृतियों से अलंकृत हैं। इनमें बनी तीर्थंकरों की मूर्तियां सजीव प्रतीत होती है।

यह मंदिर गुजरात मंदिर निर्माण शैली के अनुरूप निर्मित है, जिसमें सभा मण्डप, गर्भगृह, गूढ मण्डप, छः चौकी तथा 51 कुलिकाओं की व्यवस्था है। कुलिकाओं में बनी मूर्तियां अत्यन्त मनोहारी है। सभा मण्डप की गुम्बदनुमा छत को सुन्दर प्रतिमाओं से सजाया गया है। अग्र भाग के खंभे व उनके बीच के कलात्मक तोरण स्थापत्य कलां के सुन्दरतम प्रतीक है। इस मण्डप मं 9 तोरण बनाये गये है। मंदिर के सभा मण्डप में 8 सुन्दर कलात्मक तोरण बने हैं। स्तंभों के निचले भाग मं हिन्दु देवी-देवताओं की

आकृतियां बनी हैं। दूसरी और तीसरी मंजिल पर भगवान चन्द्र प्रभु चौमुख रूप में विराजित है। मंदिर में गणेश प्रतिमाओं को भी विभिन्न मुद्राओं में तराशा गया है। यहां तीसरी मंजिल पर एक कोठरी में धातु की बनी चौबीसी तथा पंच तीर्थी मूर्तियां संग्रहित की गई है।

मंदिर परिसर में शान्तिनाथ एवं कुन्थूनाथ जी के मंदिर जुडवां हैं। इस मंदिर की नक्काशी, मूतिकलां जैन धर्म की अमूल्य धरोहर मानी जाती है। दुमंजिले मंदिर में नीचे बना मंदिर कुन्थूनाथ को तथा ऊपर का मंदिर शान्तिनाथ को समर्पित है। मंदिर में लगे शिलालेख के मुताबित मंदिर का निर्माण 1480 ईस्वीं मंे जैसलमेर के चौपडा एवं शंखवाल परिवारों द्वारा किया गया था। मंदिर के कुछ हिस्सों में बदलाव व कुछ निर्माण कार्य 1516 ईस्वीं में कराये गये। यह मंदिर शिखरयुक्त है तथा शिखर के भीतरी गुम्बदों में वाद्य यंत्र बजाती हुई व नृत्य करती हुई अप्सराओं को उंकेरा गया है। इनके नीचे गंधर्वों की प्रतिमाएं हैं। मंदिर के सभा मण्डप के चारों ओर खंभों के मध्य सुन्दर तोरण बनाये गये हैं। गुढ़ मण्डप में एक सफेद आकार की तथा दूसरी काले संगमरमर की कायोत्सर्ग मुद्रा में मूर्तियां प्रतिष्ठित हैं, इनके दोनों पिछवाडें में 11-11 अन्य तीर्थंकरों की प्रतिमाएं बनी है। इस कारण इसे चौबीसी की संज्ञा की गई है। हिन्दुओं की दो प्रतिमाएं दशवतार एवं लक्ष्मीनारायण भी मंदिर में विराजित है। मंदिर का कोई भी हिस्सा ऐसा नहीं है जहां तक्षणकार ने अपनी हथोड़ी और छेणी से कल्पनाओं को पाषाण में साकार नहीं किया है। मानव प्रतिमाएं श्रंगारित एवं अलंकृत हैं।

मंदिर समूह संभवनाथ जी से लगा हुआ मंदिर शीतलनाथ जी का है। मंदिर का रंग मण्डप तथा गर्भगृह सटे हुए हैं। मंदिर में नौ खण्डा पार्श्वनाथ जी एक ही प्रस्तर में चौबीस तीर्थंकर की प्रतिमाएं दर्शनीय हैं। चन्द्र प्रभु के मंदिर के समीप ऋषभ का कलात्मक शिखर युक्त मंदिर है। मंदिर की विशेषता यह है कि यहां मुख्य सभी मण्डप के स्तंभों पर हिन्दु देवी-देवताओं का रूपांकन नजर आता है। कहीं राधा-कृष्ण और कहीं अकेले कृष्ण को बंशी वादन करते हुए दिखाया गया है। एक स्थान पर गणेश, शिव-पार्वती एवं सरस्वती की मूर्तियां बनी हैं। इन्द्र व विष्णु प्रतिमाएं भी उत्कीर्ण हैं। मंदिर में पद्मावती, तीर्थंकर, गणेश, अम्बिका, यक्ष एवं शालभंजिका की प्रतिमाएं भी उत्कीर्ण हैं। किले के चौगान में महावीर स्वामी का मंदिर का निर्माण 1493 के समय का बताया जाता है। यह अन्य मंदिरों की तुलना में एक साधारण मंदिर है।

जैन मंदिर समूह के मध्य पंचायतन शैली का लक्ष्मीनाथ मंदिर हिन्दुओं का महत्वपूर्ण मंदिर है। इसका निर्माण राव जैसल द्वारा दुर्ग निर्माण के समय ही किया गया था। मंदिर का सभा मण्डप किले की अन्य इमारतों के समान है। मुस्लिम आक्रांताओं के समय मंदिर का बड़ा भाग ध्वस्त हो गया था। आगे महारावल लक्ष्मण ने 15वी शताब्दी में इसका जीर्णोद्धार कराया। सभा मण्डप के खंभों पर घट पल्लव आकृतियां बनी हैं। मंदिर के दो किनारे दरवाजों पर जैन तीर्थंकरों की प्रतिमाएं भी बनी हैं। गणेश मंदिर की छत में सुन्दर विष्णु की सर्प पर विराजमान मूर्ति है। समूह में टिकमजी जिसे त्रिविकर्मा भी कहते है तथा गौरी मंदिर भी बने हैं।

गड़सीसर झील

जैसलमेर शहर में दक्षिण की ओर स्थित गड़सीसर झील जैसलमेर के सबसे प्रसिद्ध पर्यटन स्थलों में से एक है जिसे राजा रावल जैसल द्वारा बनाया गया था । कुछ वर्षों बाद इसका पुनर्निर्माण महाराजा

गरीसिसार सिंह द्वारा किया था और झील को पुनरूजीवित किया। झील का प्रवेश द्वार तिलोन-की-पोल के जरिए है, इसके महराबो को शानदार और कलात्मक ढंग से पीले बलुआ पत्थर से बनाया गया है। तिलोंन की पोल को हिंदू देवता विष्णु की मूर्ति से सजाया गया है जो 1908 में स्थापित की गयी थी। झील के किनारे कलात्मक रूप से नक्काशीदार छत्तीस मंदिर, देवगृह और घाटों से घिरा हुआ है। यह सुबह-सुबह जैसलमेर किले की फोटो लेने के लिए सबसे अच्छी जगह है जब सूरज की पहली किरणों से किला सुनहरे रंग का दिखता है। यह कई पक्षीयों को देखने वाला स्थल भी है जो जैसलमेर शहर का एक बड़ा आकर्षण है। जैसलमेर रेलवे स्टेशन से झील 2 किमी की दूरी पर है। यहीं पर एक संग्रहालय भी दर्शनीय है।

बादल विलास

जैसलमेर के अमरसागर प्रोल के पास मंदिर पैलेस में गगनचुम्बी जहाजनुमा 19 वीं शताब्दी की इमारत बादल विलास कलात्मक सुन्दरता के कारण अनूठी कृति है। पांच मंजिलों वाली यह इमारत बारिक नक्काशी कार्य और कलात्मक सुंदरता के कारण विश्व स्तरीय पहचान बना चुकी है। इसे महारावलों के निवास हेतु बनाया गया था। सांप्रदायिक सद्भाव का प्रतीक बादल विलास जैसलमेर की शिल्प कलाओं की उत्कृष्ट रचनाओं में से एक है। सैलानी इसको जब निहारते है तो इस इमारत से उनकी नजरें ही नहीं हटती, वे इसके नजारे को कैमरे में बंद कर ले जाते हैं। जैसलमेर के पर्यटन स्थलों में बादल विलास प्रमुख माना जाता है।यह इमारत स्वर्णनगरी भ्रमण करने वाले सैलानियों को दूर से ही अपनी ओर आकर्षित करती है।

पटुओं की हवेली

पटवों की हवेलियाँ अट्ठारवीं शताब्दी से सेठ पटवों द्वारा बनवाई गई थीं। वे पटवे नहीं, पटवा की उपाधि से अलंकृत रहे। उनका सिंध-बलोचिस्तान, कोचीन एवं पश्चिम एशिया के देशों में व्यापार था और धन कमाकर वे जैसलमेर आए थे। कलाविद् एवं कलाप्रिय होने के कारण उन्होंने अपनी मनोभावना को भवनों और मंदिरों के निर्माण में अभिव्यक्त किया। पटुवों की हवेलियाँ भवन निर्माण के क्षेत्र में अनूठा एवं अग्रगामी प्रयास है।

अनेक सुन्दर झरोखों से युक्त ये हवेलियाँ निसंदेह कला का सर्वेतम उदाहरण है। ये कुल मिलाकर पाँच हवेलियां हैं, जो कि एक-दूसरे से सटी हुई हैं। ये हवेलियाँ भूमि से करीब 10 फीट ऊँचे चबूतरे पर बनी हुई है व जमीन से ऊपर छः मंजिल हैं एवम भूमि के अंदर एक मंजिल होने से कुल 7 मंजिली हैं। पाँचों हवेलियों के आगे के बाहर की ओर बारीक नक्काशी व विविध प्रकार की कलाकृतियाँ युक्त खिड़कियों, छज्जों व रेलिंग से अलंकृत किया गया है जिससे हवेलियाँ अत्यंत भव्य व कलात्मक दृष्टि से अत्यंत सुंदर व आकर्षक लगती हैं।

हवेलियों में प्रवेश करने हुतु सीढियाँ चढ़कर चबूतरे तक पहुँचकर दीवान खाने (मेहराबदार बरामदा) में प्रवेश करना पड़ता है। दीवान खाने दरवाजे से अंदर प्रवेश करने पर प्रथम कमरा एवम इसके बाद चौकोर चौंक है, जिसके चारों ओर बरामदा व छोटे-छोटे कमरे बने हुए हैं। ये कमरे प्रथम तल की भांति ही 6 मंजिल तक बने हैं। सभी कमरें पत्थरों की सुंदर खानों वाली अलमारियों व आलों ये युक्त हैं। प्रथम तल

के कमरे रसोई, भण्डारण, पानी भरने आदि के कार्य में लाए जाते थे, जबकि अन्य मंजिलें आवासीय होती थी। दीवानखाने के ऊपर मुख्य मार्ग की ओर का कमरा अपेक्षाकृत बडा है, जो सुंदर सोने की कलम की नक्काशी युक्त लकडी की सुंदर छतों से सुसज्जित है। यह कमरा मोल कहलाता है, जो विशिष्ट बैठक के रूप में प्रयुक्त होता है।

प्रवेश द्वारों, कमरों और मेडियों के दरवाजे पर सुंदर खुदाई का काम किया गया है। इन हवेलियों में सोने की कलम की वित्रकारी, हाथी दांत की सजावट आदि देखने को मिलते हैं। शयन कक्ष रंग बिरंगे विविध वित्रों, बेल-बूटों, पशु-पक्षियों की आकृतियों से युक्त हैं।

दीवान नाथमल की हवेली

पाँच मंजिली पीले पत्थर से निर्मित दीवान मेहता नाथमल की हवेली का कोई जबाव नहीं है। सन 1884-85 ई. में बनी हवेली में सुक्ष्म खुदाई मेहराबों से युक्त खिड़कियों, घुमावदार खिड़कियों तथा हवेली के अग्रभाग में की गई पत्थर की नक्काशी पत्थर के काम की दृष्टि से अनुपम है। इन अनुपम कृतियों का निर्माण प्रसिद्ध शिल्पी हाथी व लालू उपनाम के दो मुस्लिम कारीगरों ने किया था। कलापूर्ण इस हवेली को दूर से देखते हैं, तो यह पूरी कलाकृति एक सी नजर आती है, परंतु यदि ध्यान से देखा जाए तो हवेली के अग्रभाग के मध्य केंद्र से दोनों ओर की कलाकृतियाँ सूक्ष्म भिनन्ता लिए हुए हैं, जो दो शिल्पकारों की अमर कृति दर्शाती हैं। हवेली का कार्य ऐसा संतुलित व सुक्ष्मता लिए हुए है कि लगता ही नहीं दो शिल्पकारों ने इसे बनाया होगा , लगता है जैसे एक शिल्पी की रचना है।

हवेली एक उँचे चबूतरे पर बनी है। इस चबूतरे तक पहुँचने हेतु चौडी सीढियाँ हैं व दोनों ओर दीवान खाने बने हैं। चबूतरे के छो पर एक पत्थर से निर्मित दो अलंकृत हाथियों की प्रतिमाएँ हैं । हवेली के विशाल द्वार से अंदर प्रवेश करने पर चौडा दालान आता है। दालान के चारों ओर विशाल बरामदे बने हैं। जिनके पीछे आवासीय कमरे बने हैं। हवेली में पत्थर की खुदाई के छज्जे, छावणे, स्तंभों, मौकियों, चापों, झरोखों, कंवलों, तिबरियों पर फूल, पत्तियां, पशु-पक्षियों की बडी ही मनमोहक आकृतियां बनी हैं। कुछ नई आकृतियां जैसे स्टीम इंजन, सैनिक, साईकल, उत्कृष्ट नक्काशी युक्त घोडे, हाथी आदि उत्कीर्ण हैं।

सालिम सिंह की हवेली

सालिम सिंह की हवेली छह मंजिली इमारत है, जो नीचे से संकरी और ऊपर से निकलती-सी स्थात्य कला का प्रतीक है। जहाजनुमा इस विशाल भवन आकर्षक खिड़कियां, झरोखे तथा द्वार हैं। नक्काशी यहाँ के शिल्पियों की कलाप्रियता का प्रमाण है। इस हवेली का निर्माण दीवान सालिम सिंह द्वारा करवाया गया, जो एक प्रभावशाली व्यक्ति था और उसका राज्य की अर्थव्यवस्था पर पूर्ण नियंत्रण था।दीवान मेहता सालिम सिंह की हवेली उनके पुस्तैनी निवास के ऊपर निर्मित कराई गई थी। हवेली की सर्वोच्च मंजिल जो भूमि से लगभग 80 फीट की उँचाई पर है, मोती महल कहलाता है। कहा जाता है कि मोतीमहल के ऊपर लकडी की दो मंजिल और भी थी, जिनमें कांच व चित्रकला का काम किया गया था। जिस कारण वे कांचमहल व रंगमहल कहलाते थे, उन्हें सालिम सिंह की मृत्यु के बाद राजकोप के कारण उतरवा दिया गया। इसके चारों ओर उनतालीस झरोखे व खिड़कियां हैं। इन झरोखों तथा खिड़कियों पर अलग-अलग कलाकृति उत्कीर्ण हैं। इनपर बनी हुई जालियाँ पारदर्शी हैं। इन जालियों में

फूल-पत्तियाँ, बेलबूटे तथा नाचते हुए मोर की आकृति उत्कीर्ण हैं।

हवेली की भीतरी भाग में मोती-महल में जो 4-5 वीं मंजिल पर है, स्थित फव्वारा आश्चर्यजनक प्रतीत होता है। सोने की कलम से किए गए छतों व दीवारों पर चित्रकला के अवशेष आज भी उत्कृष्ट कला को प्रदर्शित करते हैं। इन पर कई जैन धर्म से संबंधित कथाएँ चिह्न, तंत्र व तीर्थकर व मंदिर आदि उत्कीर्ण हैं। शिला पर उत्कीर्ण लेख के अनुसार इसका निर्माण काल1518 विक्रम संवत् है।

राष्ट्रीय मरू उद्यान अभयारण्य
राज्य सरकार ने 4 अगस्त 1980 को 3162 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र (1900 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र जैसलमेर में और 1262 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र बाड़मेर में) को राष्ट्रीय मरू उद्यान घोषित किया। कहने को तो यह राष्ट्रीय उद्यान का दर्जा अभी तक नहीं मिल पाया है। यहाँ गर्मियों में तापमान 47-480 सेल्सियस तक पहुँच जाता है और सर्दियों में तापमान 20 सेल्सियस या उससे भी न्यून हो जाता है।

यहाँ करीब 700 प्रजातियों की वनस्पति पाई जाती है। जिसमें से केवल घास ही 107 प्रजातियां हैं। रेतीले क्षेत्रे में सबसे अधिक जो पौधा पाया जाता है वह है सेवन घास। अन्य प्रमुख प्रजातियां हैं- सीनिया, खींप, फोग, बोंवली, भुई, मूरठ, लाना आदि। केर, लांप, मूरठ, बेर आदि प्रजातियां पशुओं के चारे के लिए काम में ली जाती हैं। खेजड़ी मरूस्थल का सबसे महत्वपूर्ण पौधा है। यहाँ के भू-दृश्य को रंग रूप प्रदान करने वाला पौधा रोहिड़ा भी है। अन्य वृक्षों में बेर, बोरडी, कुमठ जाल, आक, थोर, गगूल, टांटियां और गांठिया आदि हैं।

आकल वुड फॉसिल पार्क
यह जैसलमर से मात्र 15 किलोमीटर दूर जैसलर-बाड़मेर रोड पर स्थित है और 21 हैक्टेयर क्षेत्र में फैला हुआ है। लाखों वर्ष पूर्व यहाँ पाए जाने वाले सागरीय जीवों के जीवाश्मों के लिए यह प्रसिद्ध है। इस क्षेत्र में फैले हुए 25 वुड फॉसिल विद्यमान हैं, जिसमें से 10 फॉसिल का काफी भाग पृथ्वी की सतह से ऊपर अनावृत है। सबसे बड़े फॉसिल की लम्बाई 7 मीटर एवं परिधि डेढ़ मीटर है। पर्यटन की दृष्टि से राष्ट्रीय मरू उद्यान का अत्यन्त महत्व है।

सम के धोरे
रेगिस्तान में पहुँचकर रेत के धोरें नहीं देखें यह कैसे हो सकता है। जैसलमेर से 42 कि.मी. दूर सम एवं 45 कि.मी. दूर खुहड़ी के रेतीले धोरों का आकर्षण सैलानियों के लिए किसी भी प्रकार कम नहीं है। बालू के लहरदार धोरों पर जब संध्याकाल में सूर्य की किरणें अपनी आभा फैलाती हैं तो इनका रंग सुनहरा हो जाता है जो देखने वालों के दिल को छू लेता है। बालू के टीलों पर ऊँट की सवारी करना तथा स्थानीय कलाकारों के लोक संगीत का आनन्द लेने का अपना अलग ही मजा हैं। रात्रि में इन धोरों के समीप स्थित खुले मंच पर लोक कलाकारों के गीत-संगीत, नृत्य आदि का आनन्द भी सैलानी उठाते हैं। इन धोरों एवं इनका आनन्द लेने का मजा वही जान सकता है जिसने नजदीक से इन्हें देखा है और महसूस किया है।

लौद्रवा
जैसलमेर से 13 किमी. दूरी पर लौद्रवा का जैन मंदिर 23वें तीर्थंकर भगवान पार्श्वनाथ को समर्पित है।

गर्भगृह में सहसत्रफणी पार्श्वनाथ की साढ़े तीन फीट ऊंची श्याम वर्णीय कसौटी पत्थर की भव्य प्रतिमा स्थापित है, जिसकी प्रतिष्ठा आचार्य श्री जिनपति सूरी द्वारा संवत् 1263 में कराई गई थी। इस मूर्ति के ऊपर हीरा जड़ा हुआ है जो मूर्ति के अनेक रूपों का दर्शन कराता है।

मंदिर का तोरण द्वार, प्रत्येक स्तम्भ, प्रवेश द्वार एवं शिखर पर शिल्पकारों की कल्पना अद्वितीय रूप में दिखाई देती है। शिल्प कला के दर्शन मात्र से ही आनन्द की अनुभूति होने लगती है। चीनी शैली में निर्मित मंदिर का शिखर, भगवान की प्राचीन प्रतिमा तथा प्रवेश द्वार का ऊपरी भाग देखकर ही देलवाड़ा, रणकपुर और खजुराहो मंदिरों की याद ताजा हो उठती है। मंदिर के चारों कोनों पर एक-एक मंदिर बनाया गया है। मंदिर के दक्षिण-पूर्वी कोनें पर आदिनाथ, दक्षिण-पश्चिमी कोनें पर अजीतनाथ, उत्तर-पश्चिमी कोनें पर संभवनाथ एवं उत्तर-पूर्व में चिन्तामणी पार्श्वनाथ का मंदिर स्थापित है। मूल देवालय का शिखर आर्कषक है। इस मंदिर में एक प्राचीन कलात्मक रथ रखा गया है जिसमें चिन्तामणी पार्श्वनाथ स्वामी को गुजरात से लाया गया था। मंदिर जैसलमेर के पीले पत्थर से निर्मित है। स्तम्भों पर फूल-पत्तियों की बारीक खुदाई, मंदिर के पास निर्मित समोशरण के ऊपर अष्टापद गिरी तथा मंदिर परिसर में कलात्मक तोरण द्वार एवं कल्पवृक्ष की कोरणी अत्यन्त मनोहारी है।

तनोटराय माता मंदिर

भारत वर्ष में यूं तो माता के अनेक ऐतिहासिक, धार्मिक एवं कलात्मक मंदिर श्रद्धालुओं की आस्था का प्रबल केन्द्र हैं परन्तु राजस्थान में भारत और पाकिस्तान की सीमा पर जैसलमेर जिले में 120 किलोमीटर दूर भारतीय सीमा में स्थित तनोटराय मातेश्वरी के मंदिर की बात ही निराली है। कहा जाता है कि 1965 के भारत-पाक युद्ध में पाकिस्तानी सेना द्वारा इस मंदिर पर भारी बमबारी की गई परन्तु मंदिर को जरा भी क्षति नहीं हुई। रेगिस्तान के धोरों के बीच भारत-पाक सीमा पर तनोट माता के दर्शन करना अपने आप में रोमांच उत्पन्न करता है।

रामदेवरा

राजस्थान में अनेक ऐसे महापुरूष हुए जिन्होंने मानव देह धारण कर अपने कर्म और तप से यहां के लोक जीवन को आलोकित किया। उनके चरित्र, कर्म और वचनबद्धता से उन्हें जनमानस में लोकदेवता की पदवी मिली और वे जन-जन में पूजे जाने लगे। ऐसे ही लोकदेवताओं में बाबा रामदेव जिनका प्रमुख मंदिर जैसलमेर जिले के रामदेवरा में सद्भावना की जीती जागती मिसाल है। हिन्दू समाज में वे "बाबा रामदेव" एवं मुस्लिम समाज "रामसा पीर" के नाम से पूजनीय है। बाबा रामदेव के जयकारे गुंजायमान करते हुए यह जत्थे मीलों लम्बी यात्रा कर बाबा के दरबार में हाजरी लगाते हैं। साथ लेकर गये ध्वजाओं को मुख्य मंदिर में चढ़ा देते हैं। भादवा के मेले में महाप्रसाद बनाया जाता है। यात्री भोजन भी करते हैं और चन्दा भी चढ़ाते हैं। यहां आने वालांे के लिए बड़ी संख्या में धर्मशालाएं और विश्राम स्थल बनाये गये हैं। सरकार की ओर से मेले में व्यापक प्रबंध किये जाते है। रात्रि को जागरणों के दौरान रामदेवजी के भोपे रामदेवजी की थांवला एवं पड़ बांचते हैं।

(लेखक कोटा में रहते हैं। वरिष्ठ पत्रकार एवँ लेखक हैं व पर्यटन से जुड़े विषयों पर शोधपूर्ण व रोचक लेख लिखते हैं)